ओ३म्

वैदिक संस्कृति का उद्घोषक

वैदिक सार्वदेशिक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली का साप्ताहिक मुख-पत्र

शुल्क :- एक प्रति 5 रुपया (भारत में) वार्षिक 250 रुपये तथा आजीवन 2500 रुपये

वर्ष 15 अंक 16 कुल पृष्ठ-4 10 से 16 दिसम्बर, 2020 दयानन्दाब्द 197 सृष्टि सम्वत् 1960853121 सम्वत् 2077 मा. कृ.-10

वर्ष 2024 में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की दूसरी जन्म शताब्दी हर्षोल्लास पूर्वक एवं समर्पित होकर मनाने के लिए

अतीत से प्रेरणा लेकर उज्ज्वल वर्तमान और भविष्य की आधारशिला रखने का लें संकल्प

– स्वामी आर्यवेश

आर्य समाज आर्यों की संस्था है। आर्यों ने ही उसमें अपनी वर्चस्वी भूमिका निभानी है। एक आर्य यदि खड़ा होकर डट जाये तो दस दुर्जनों को पीछे धकेल सकता है। लेकिन आर्यों में ऐसा आत्मबल तभी आयेगा जब वह महर्षि दयानन्द की जीवन सरिता में नित्य स्नान करेगा। राजनैतिक चेतना, शिक्षा का विस्तार, नारी जागरण, दलितोद्धार, समाज सुधार आदि किसी भी दृष्टि से देखा जाये तो भारत पर जितना प्रभाव महर्षि दयानन्द जी का है उतना अन्य किसी सुधारक का नहीं। आर्य समाज द्वारा प्रज्ज्वलित क्रांति दावानल में सामाजिक बुराईयाँ, धार्मिक भ्रांतियाँ एवं कुरीतियाँ धू–धू कर जलने लगी थीं और लाखों लोगों को अन्धविश्वास तथा पाखण्ड से मुक्ति मिली थी। ऐसा इसलिए हो पाया कि गिनती में कम होने पर भी हर आर्य समाज अपने में एक पूर्ण सक्रिय इकाई के रूप में काम करता था। ये इकाईयाँ न तो एक–दूसरे का मुंह ताकती थीं और न ही एक दूसरे पर निर्भर होकर कार्य करती थी। बल्कि उनमें परस्पर होड़ रहती थी कि कैसे सार्थक रूप में एक समाज अन्य समाजों से आगे निकलकर नाम कमायें। हर इकाई समर्पित होकर महर्षि के मिशन के लिए कार्य करती थीं। आज भी कुछ ऐसी समाजें हैं लेकिन उनकी संख्या बहुत कम है।

वर्तमान समय में यदि परिस्थितियों का आंकलन किया जाये तो दिखाई देता है कि आज समाज में इतनी अधिक विसंगतियाँ आ गई हैं, यदि हम इनके समाधान की दिशा में अविलम्ब आगे नहीं आये तो समय हाथ से निकल जायेगा। आज सारा देश समस्याओं से घिरा हुआ है। विश्व को चरित्र का संदेश देने वाला भारत आज चरित्रहीनता की हदों को पार करता जा रहा है। देश में गरीबी, बेरोजगारी, बलात्कार, अपहरण, अशिक्षा, आतंकवाद, जातिवाद, साम्प्रदायिकता, नशाखोरी, कन्या भ्रूण हत्या, भ्रष्टाचार जैसी बुराईयों से मानव जाति त्राहि–त्राहि कर रही है। ऐसे विकट समय में आर्य समाज ही कुछ कर सकता है। आर्य समाज एक आशावादी संगठन है, यह कभी निराश नहीं हुआ, देश की गुलामी के दिनों में इसका आविर्भाव हुआ और थोड़े ही समय में यह विश्वभर में विख्यात हो गया। अमेरिका के एक विद्वान् एन्ड्रयूज ने महर्षि दयानन्द जी के समय में ही उनके बारे में लिखा था कि मुझे आर्य समाज के रूप में एक आग दिखाई देती है जो देश के सभी अन्धविश्वास, अज्ञान व कुरीतियों को दग्ध कर रही है। आर्य समाज की आग इसकी विचारधारा की आग है। आर्य समाज मानव मात्र के कल्याण की बात करता है। आर्य समाज का दृष्टिकोण केवल वेद और यज्ञ तक ही सीमित नहीं है, अपितु जीवन के सभी महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर भी इसका व्यापक दृष्टिकोण है। हमें दूसरों का जीवन बनाना है तथा समाज में क्रांति लानी है और इस क्रांति का प्रारम्भ अन्दर से ही होता है। यदि हम अपने व दूसरों के अन्दर क्रांति की ज्वाला को प्रज्ज्वलित करने का कार्य कर पाये तो हमारा रास्ता अत्यन्त सुगम हो सकता है।

आर्य समाज को अब पुनः कैसे जीवन्त किया जाये यह अत्यन्त विचारणीय है। आर्य समाज में नई शक्ति, स्फूर्ति और सक्रियता लाने के लिए हम सबको समर्पित भावना से मिल बैठकर विचार करना होगा। वर्तमान परिस्थितियों में सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध बड़े–बड़े आन्दोलन करना, शास्त्रार्थ करना, शुद्धि आन्दोलन को बढ़ावा देना, स्वदेशी का बिगुल बजाना, वेद प्रचार और साहित्य प्रकाशन को बढ़ावा देना, स्वभाषा, स्वसंस्कृति और स्वाभिमान की सोच देशवासियों में पैदा कर उनमें उत्साह का नव–संचार करना, धार्मिक अन्धविश्वासों और सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध अलख जगाना, गुरुकुलों को आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बनाना, प्राकृतिक आपदाओं में राहत केन्द्र खोलकर मानवता का पथ प्रशस्त करना, वानप्रस्थियों और संन्यासियों को प्रशिक्षित कर समाजसेवा के लिए कटिबद्ध करना आदि कुछ ऐसे कार्य हैं जिन्हें पुनः पूर्ण उत्साह और समर्पित भावना के साथ किये जाने की आवश्यकता है।

वर्ष 2024 में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की दूसरी जन्म शताब्दी हम आर्यों के लिए एक सुअवसर लेकर आ रही है। यदि हम सब आर्य मिल बैठकर चिन्तन करें और संगठित होकर पूर्ण उत्साह तथा समर्पित भावना से महर्षि के मिशन को पूर्ण करने का संकल्प ले लें तो कोई कारण नहीं है कि आर्य समाज को पुनः तेजस्वी, वर्चस्वी और गतिशील न बनाया जा सके। इस परम लक्ष्य की पूर्ति के लिए हमें अतीत से प्रेरणा लेकर उज्ज्वल वर्तमान और भविष्य का निर्माण करना होगा, तभी हम महर्षि के स्वप्न को साकार कर सकेंगे।

– प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली

सम्पादक - प्रो. विट्ठलराव आर्य

वैदिक चार–धाम

– महात्मा चैतन्यमुनि

जब से आलस्य एवं प्रमाद के कारण वेद का पठन–पाठन छूटा, अनेक प्रकार के पाखण्ड एवं आडम्बर फैलते चले गये। आज व्यक्ति ईश्वर, उपासना, धर्म, कर्म, यज्ञ, व्रत, तीर्थ, श्राद्ध तथा गुरु एवं गुरुमंत्र आदि के वास्तविक महत्व एवं स्वरूप आदि को पूर्णरूप से विस्मृत कर चुका है। चार–धाम के सम्बन्ध में भी अनेक प्रकार की कल्पित मान्यताएँ स्थापित करके व्यक्ति जीवन को बर्बाद कर रहा है। चारों दिशाओं में चार–धामों के नाम पर चार स्थान सुनिश्चित कर दिये गये हैं जिनकी यात्रा करके व्यक्ति स्वयं को समस्त पापों से मुक्त होने तथा भवसागर से पार हो जाने की मिथ्या धारणा बनाए हुए हैं। वास्तव में यदि पापों से मुक्त होना इतना ही आसान है तो यह तो किसी के लिए भी असम्भव नहीं है। लोग पैदल या किराया खर्च करके वहाँ पहुँच सकते हैं। ये कल्पित किए गए धाम हैं। पूर्व में जगन्नाथ धाम, दक्षिण में रामेश्वरम् धाम, पश्चिम में द्वारकापुरी धाम और उत्तर में बद्रीनाथ धाम। इनमें से तीन भगवान विष्णु को समर्पित हैं और चौथा धाम रामेश्वरम्, भगवान शिव को समर्पित है। वास्तव में चार–धाम क्या हैं, इस पर चिन्तन करते हैं। ऋग्वेद में एक मंत्र है –

चत्वारो मा मशर्शारस्य शिश्वस्त्रयो राज्ञ आयवसस्य जिष्णोः।
रथो वां मित्रावरुणा दीर्घाप्साः स्यूमगभस्तिः सूरो नाद्यौत्।।

– ऋ. 1।122।15

मन्त्र में प्रार्थना की गई है कि मुझे मशर्शार के चार पुत्र प्राप्त हों। 'मशर' शब्द क्रोध का वाचक है। उसका शार–हिंसन करने वाला मशर्शार है। क्रोध को नष्ट करने वाला व्यक्ति ही धर्म कार्यों में प्रवृत्त हो सकता है, क्रोध की अवस्था में कोई भी धर्मकार्य सम्भव नहीं। क्रोधरहित व्यापारी ही व्यापार में सफल होकर अर्थ का अर्जन करता है। क्रोध की अवस्था में सांसारिक आनन्दों (काम) का प्राप्त होना भी सम्भव नहीं। क्रोध में भूख भी समाप्त हो जाती है और खाया हुआ अन्न विष ही पैदा करता है। क्रोध से मोक्ष भी सम्भव नहीं। क्रोध को शीर्ण करने वाला ही 'धर्म–अर्थ–काम व मोक्ष' रूप चारों पुरुषार्थों को सिद्ध करता है। क्रोध का शीर्ण करने वाले मशर्शार के ये ही चार पुत्र हैं, ये मुझे प्राप्त हों। यजुर्वेद में आया है –

ताऽउभौ चतुरः पदः सम्प्रसारयाव स्वर्गे लोके प्रोर्णुवाथां।
वृषा वाजी रेतोधा रेतो दधातु।।

– ऋ. 23।30

प्रभु से मिलकर मैं प्रभुकृपा से 'धर्मार्थ काम–मोक्ष' इन चार पुरुषार्थों को सिद्ध करूँ। अपने को स्वर्गलोक में स्थापित करूँ। 'वृषा, वाजी, रेतोधा' प्रभु राजा व प्रजा में रेतस् का आधान करें, अर्थात् प्रभु राजा व प्रजा को शक्तिशाली बनाएं। यजुर्वेद (32।9–10) में परमात्मा को धाम अर्थात् घर, ज्योति एवं तृतीय धाम अर्थात् सत्वगुणी कहा है। महर्षि दयानन्द जी ने यजुर्वेद के एक मन्त्र (17।79) का भाष्य करते हुए सात धामों की चर्चा की है –

सप्त तेऽअग्ने समिधः सप्त जिह्वाः सप्तऽऋषयः सप्त धाम प्रियाणि।
सप्त होत्राः सप्तधा तवा यजन्ति सप्त योनीरापृणस्व घृतेन स्वाहा।।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने इस मन्त्र की व्याख्या करते हुए जन्म, स्थान, नाम, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये सात धाम बताए हैं। सामवेद में धाम को परमात्मा की ज्योति व तेज कहा गया है – ^^rk ok lE;xngo.k"ke';ke /kke pA o;ks ok fe=k L;keAA** (सा. 986) प्राण व अपान बड़े उत्तम प्रकार से किसी भी प्रकार द्रोह नहीं करते। इनकी साधना से हमारा नाश नहीं होता। हे प्रभु! हम आपकी स्फूर्ति व शक्ति को प्राप्त करें। आपकी साधना से हम अपने अन्दर शक्ति व स्फूर्ति को अनुभव करें। हमें अपने अन्दर थकावट अनुभव न हो। और हम आपकी (धाम) ज्योति व तेज को प्राप्त करें। अथर्ववेद (9।10।21) में वेदवाणी को चार पुरुषार्थों अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का प्रतिपादन करने वाली बताया है।

भारतीय संस्कृति में व्यक्ति की चतुर्दिक उन्नति अर्थात् इस लोक एवं परलोक की उन्नति के लिए 'पुरुषार्थ–चतुष्टय' के कार्यान्वयन का आदेश दिया गया है। यह पुरुषार्थ चतुष्टय ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष है। वेद, दर्शन, ब्राह्मणग्रन्थ तथा रामायण एवं महाभारतादि अनेक ग्रन्थों में मानव का लक्ष्य इन्हीं चार पुरुषार्थों की प्राप्ति बताया है। इसे चतुवर्ग नाम से भी जाना जाता है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, इस पुरुषार्थ चतुष्टय को पूर्णरूप से समझने के लिए हम पण्डित रघुनन्दन शर्मा जी के ग्रन्थ 'वैदिक सम्पत्ति' से उनके विचार उद्धृत करना चाहते हैं। वे इनकी बहुत ही सार्थक एवं सटीक और व्यावहारिक व्याख्या करते हुए लिखते हैं – ''उन्होंने (आर्यों ने) अपना अन्तिम ध्येय मोक्ष को ही माना है। परन्तु स्मरण रखना चाहिए कि मोक्ष भी इसी संसार के द्वारा ही प्राप्त होता है, इसलिए मुमुक्षु को इस संसार के तत्त्व का और उसके उचित उपयोग का ज्ञान प्राप्त करना अनिवार्य होता है। संसार का तत्त्वज्ञान और इसका उचित उपयोग ही मोक्ष का साधक है, इसलिए आर्यों ने संसार का उपयोग करते हुए मोक्षप्राप्त करने की विधि को अपनी सभ्यता का मूल ठहराया है और उस विधि को चार भागों में अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष के नामों से विभक्त किया है।''

अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष आर्यों की सभ्यता की आधारशिलाएँ हैं। इनमें मनुष्य की वे समस्त अभिलाषाएँ अन्तर्भूत हो जाती हैं, जिनका उल्लेख हमने वेदों के मन्त्रसंग्रह के आदि में किया है। क्योंकि मनुष्य के शरीर में आवश्यकताओं को चाहने वाले चार ही स्थान हैं और वे चारों पदार्थ उनकी पूर्ति कर देते हैं। मनु भगवान् अपने एक श्लोक में कहते हैं कि –

अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति।।

– मनुस्मृति

अर्थात् पानी से शरीर, सत्य से मन, विद्या और तप से आत्मा तथा ज्ञान से बुद्धि शुद्ध होती है। इस श्लोक में शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा की गणना अलग–अलग की गई है। हम देख रहे हैं कि इन चारों की जहाँ पानी आदि अलग–अलग चार पदार्थों से शुद्धि होती है, वहाँ इन शरीरादि चारों अंगों को अलग–अलग चार पदार्थों की आवश्यकता भी होती है। ये चारों आवश्यक पदार्थ अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष ही है।

शरीरपोषण के लिए अर्थ की, मनस्तुष्टि के लिए काम की, बुद्धि के लिए धर्म की और आत्मा की शांति के लिए मोक्ष की आवश्यकता होती है। क्योंकि बिना भोजनादि (अर्थ) के शरीर निकम्मा हो जाता है, बिना काम (स्त्री) के मन निकम्मा हो जाता है, बिना मोक्ष (अमरता) के आत्मा निकम्मा हो जाता है और बिना धर्म (सत्य और न्याय के) बुद्धि निकम्मी हो जाती है। अर्थ और शरीर का, काम और मन का तथा मोक्ष और आत्मा का सम्बन्ध तो प्रत्यक्ष ही है, इसमें किसी को शंका नहीं हो सकती, परन्तु धर्म और बुद्धि का सम्बन्ध सुनकर सम्भव है, लोग कहने लगे कि यह बात ठीक नहीं है। क्योंकि संसार के धर्मों को बुद्धि का साथ करते हुए नहीं देखा जाता। परन्तु हम जिस वैदिक धर्म की बात कर रहे हैं, उसकी दशा ऐसी नहीं है। वैदिक धर्म बुद्धिपूर्वक ही है। इसका कारण यही है कि वैदिक धर्म वेदों के द्वारा स्थिर किया गया है और वेद 'बुद्धिपूर्वा वाक् प्रकृतिर्वेदे' अनुसार बुद्धिपूर्वक है, इसलिए इस धर्म पर वह शंका नहीं हो सकती। दूसरी बात यह है कि बुद्धि ज्ञान से सम्बन्ध रखती है। जैसे–जैसे ज्ञान की वृद्धि होती है वैसे ही वैसे धर्म की भी वृद्धि होती है। इसी सिद्धान्त पर पहुँचकर यूरोप का प्रसिद्ध विद्वान् हक्स्ले कहता है कि ''सच्चा विज्ञान और सच्चा धर्म दोनों यमज भाई हैं। इनमें से यदि एक–दूसरे से अलग कर दिया जायेगा, तो दोनों की मृत्यु हो जायेगी। विज्ञान में जितनी ही अधिक धार्मिकता होगी, उतनी ही अधिक उसकी उन्नति होगी। विज्ञान का अभ्यास करते समय मन की धार्मिक वृत्ति जितनी ही अधिक होगी, विज्ञानविषयक खोज उतनी ही अधिक गहरी होगी और उसका आधार जितना ही अधिक दृढ़ होगा, धर्म का विकास भी उतना ही अधिक होगा। तत्त्ववेत्ताओं ने जो अब तक बड़े–बड़े काम किये हैं, उन्हें सिर्फ उनके बुद्धिवैभव का ही फल न समझिये, किन्तु उनकी धार्मिक वृत्ति ही इसमें अधिक कारणभूत है। इसलिए धर्म का ज्ञान के साथ और ज्ञान का बुद्धि के साथ घनिष्ट सम्बन्ध है, इसमें सन्देह नहीं।

जिस प्रकार धर्म का बुद्धि से सम्बन्ध है, उसी तरह अर्थ से शरीर का, काम से मन का और मोक्ष से आत्मा का भी सम्बन्ध है। इन्हीं अर्थ, धर्म, कामादि में मनुष्य के जीवन, रति, मान, ज्ञान, न्याय और परलोक आदि की समस्त कामनाओं का समावेश हो जाता है, अर्थात् जीवन की अभिलाषा अर्थ में, स्त्रीपुत्रादि की काम में, मान, ज्ञान और न्याय की धर्म में और परलोक की कामना मोक्ष में समा जाती है। अर्थात् समस्त एषणाओं का समावेश अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष में हो जाता है और चारों पदार्थ एक दूसरे के आधार, आधेय बन जाते हैं। जिस प्रकार अर्थ अर्थात् भोजनवस्त्रादि के बिना शरीर की स्थिति नहीं रह सकती और न काम अर्थात् रति के बिना शरीर उत्पन्न ही हो सकता है और न बिना शरीर और शरीर निर्वाह के मोक्षसाधन ही हो सकता है, उसी तरह बिना मोक्षसाधन के बिना मोक्षमार्ग निर्धारण किये अर्थ और काम को भी सहायता नहीं मिल सकती। क्योंकि अर्थ और काम के समस्त पदार्थ प्रायः मनुष्यों, पशुओं और वनस्पतियों से ही प्राप्त होते हैं। ये सभी जीव हैं और कर्मफल भोग रहे हैं। इनका भी उद्धार तभी हो सकता है, जब ये कर्मफल भोग कर मनुष्य शरीर में आवें और यहाँ मोक्ष का मार्ग खुला हुआ पावें। इसलिए मोक्ष की सच्ची कामना से ही अर्थ और काम को अर्थात् मनुष्यों और वनस्पतियों को सहायता मिल सकती है। मोक्ष की सच्ची कामना के बिना अर्थ और काम का उचित उपयोग हो ही नहीं सकता और बिना उचित उपयोग के अर्थी स्वार्थी हो जाते हैं और कामना वाले कामी हो जाते हैं, तथा स्वार्थी और कामी मिलकर समाज को नष्ट कर देते हैं।

इसलिए कहा है कि मोक्ष से अर्थ और काम को सहायता मिलती है। किन्तु प्रश्न यह होता है कि अर्थ काम से मोक्ष को और मोक्ष से अर्थ काम को परस्पर उचित सहायता दिखाने वाला नियम कौन सा है? इसका उत्तर स्पष्ट है कि अर्थ, काम और मोक्ष में सामंजस्य उत्पन्न कराने वाला धर्म है। धर्मपूर्वक मोक्षसाधन से अर्थ और काम की उचित व्यवस्था हो जाती है और धर्मपूर्वक अर्थ, काम को ग्रहण करने से मोक्ष सुलभ हो जाता है। इस प्रकार से ये चारों पदार्थ एक दूसरे के सहायक हो जाते हैं। यद्यपि ये चारों पदार्थ परस्पर एक–दूसरे के सहायक हैं और अपने–अपने कार्य में चारों बड़े महत्त्व के हैं, पर चारों में मोक्ष का स्थान सबसे ऊँचा है। मोक्ष की महत्ता का कारण मृत्यु के दुःखों से छूट जाना है। मनुष्य की समस्त अभिलाषाओं में दीर्घातिदीर्घ जीवन की अभिलाषा ही सर्वश्रेष्ठ है। जिन्दगी के मुकाबिले में मनुष्य अर्थ, काम, मान, न्याय और ज्ञान की परवाह नहीं करता। इस बात का प्रमाण मरने के समय ही मिलता है। इसलिए जिस साधन से मृत्यु का भय सदैव के लिए दूर हो जायें जिसके प्राप्त हो जाने पर मृत्यु के कारणरूप इस जन्म ही का अभाव हो जाये उस मोक्ष की समता कौन कर सकता है? यही कारण है कि आर्यों ने अपनी सभ्यता को मोक्ष प्राप्ति के उच्च आदर्श पर स्थिर किया है और केवल धर्मपूर्वक प्राप्त अर्थ और काम को ही उसका सहायक माना है, धर्माविरुद्ध को नहीं। धर्मपूर्वक अर्थ और काम को ग्रहण करके मोक्ष प्राप्त करने के लिए ही आर्यों को अपना जीवन धार्मिक बनाने की शिक्षा दी गई है। इसलिए वे ब्रह्मचर्याश्रम से लेकर संन्यास पर्यन्त सन्ध्योपासन, प्राणायाम और योगाभ्यास द्वारा अपने जीवन को मोक्षाभिमुखी बनाते हैं।''

वास्तविकता यह है कि वैदिक संस्कृति में व्यक्ति का लक्ष्य इन्हीं चार सिद्धियों को प्राप्त करना अनिवार्य रूप से सुनिश्चित किया गया था। यही कारण है कि आयुर्वेद में जहाँ शरीर की बात की जा रही है वहाँ भी कहा गया है – ''धर्मार्थकाममोक्षाणाम् आरोग्यं मूलमुत्तमम्।' अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष सभी पुरुषार्थों का उत्तम मूल आरोग्य ही है। इन चार पुरुषार्थों का महत्त्व एवं अनिवार्यता इस बात से भी स्पष्ट होती है कि भारतीय मनीषियों ने इतिहास की व्याख्या भी इस प्रकार से की है –

धर्मार्थकाममोक्षाणामुपदेशसमन्वितम्।
पूर्ववृत्तकथायुक्तमितिहासं प्रचक्षते।।

अर्थात् जिसमें पूर्ववृत्त (प्राचीन काल में घटित घटनाओं का) वर्णन धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में उपदेश सहित कथन किया गया हो, उसे इतिहास कहते हैं।

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी आदेश देते हैं – ''वेद और अग्नि आदि पदार्थों से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को सिद्ध करें तथा अनेक प्रकार के शिल्पविद्या की उन्नति करो।'' (वेदोक्त धर्म विषय) अपने ग्रन्थ 'स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश' में वैदिक सिद्धान्तों की चर्चा करने के बाद लिखते हैं – ''सर्वसत्य का प्रचार कर, सबको एक्यमत में करा, द्वेष छुड़ा परस्पर में दृढ़ प्रीतियुक्त कराके, सबसे सबको सुख–लाभ पहुँचाने के लिए मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है। सर्वशक्तिमान परमात्मा की कृपा, सहाय और आप्तजनों की सहानुभूति से 'यह सिद्धान्त सर्वत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जावे, जिससे सब लोग सहज से धर्मार्थ काम, मोक्ष की सिद्धि करके सदा उन्नति और आनन्दित होते रहें। यही मेरा मुख्य प्रयोजन है।'' अपने ग्रन्थ 'व्यवहारभानु' के आरम्भ में ही वे मनुष्यों को अच्छी शिक्षा से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष फलों की सिद्धि मिलने की बात कहते हैं। अपने वेद भाष्य में महर्षि दयानन्द जी ने अनेक मंत्रों के भावार्थ करते हुए धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष की सिद्धि की चर्चा की है। इस सम्बन्ध में यजुर्वेद 12।76, 79 तथा 13।46 और 15।44 भी द्रष्टव्य है। सत्यार्थप्रकाश के चौथे समुल्लास में गृहस्थ प्रकरण के अन्तर्गत वे अतिथि सेवा के सम्बन्ध में लिखते हैं – ''......सत्संग कर उनसे ज्ञान–विज्ञान आदि, जिनसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति होवे, ऐसे–ऐसे उपदेशों का श्रवण करें।'' सन्ध्या में नमस्कार मन्त्र से पूर्व 'समर्पण मंत्र' में साधक जिन वस्तुओं की शीघ्र सिद्धि चाहता है, उसे महर्षि दयानन्द जी ने इस प्रकार से व्यक्त किया है – ''हे ईश्वर! दयानिधे! भवत्कृपयाऽनेन जपोपासनादि कर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणाम् सद्यः सिद्धि=र्भवेन्नः।।'' अर्थात् हे परमेश्वर दयानिधे! आपकी कृपा से जपोपासनादि कर्मों को करके हम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि को शीघ्र प्राप्त होवें। महर्षि जी अपने ग्रन्थ 'संस्कारविधि' की भूमिका के अन्त में लिखते हैं – ''इसमें प्रथम ईश्वर की स्तुति प्रार्थना–उपासना अन्त्येष्टिपर्यन्त सोलह संस्कार क्रमशः लिखते हैं और यहाँ सब मंत्रों का अर्थ नहीं लिखा है, क्योंकि इसमें कर्मकाण्ड का विधान है, इसलिए विशेषकर क्रिया–विधान लिखा है और जहाँ–जहाँ अर्थ करना आवश्यक है, वहाँ–वहाँ अर्थ भी कर दिया है और मन्त्रों के यथार्थ अर्थ मेरे किए वेदभाष्य में लिखे ही हैं, जो देखना चाहें, वहाँ से देख लेवें। यहाँ तो केवल क्रिया करनी ही मुख्य है, जिसे करके शरीर और आत्मा सुसंस्कृत होने से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त हो सकते हैं और सन्तान अत्यन्त योग्य होते हैं, इसलिए संस्कारों का करना सब मनुष्यों को अति उचित है।''

& egkno] lUnjuxj&174401 ¼fgekpy in'k½

ft l idkj /keZ dk cf) ls lEcU/k g] mlh rjg vFkZ ls 'kjhj dk] dke ls eu dk vkj ek{k ls vkRek dk Hkh lEcU/k gSA bUgha vFkZ] /keZ] dkekfn esa euq"; ds thou] jfr] eku] Kku] U;k; vkj ijyksd vkfn dh leLr dkeukvksa dk lekos'k gks tkrk g] vFkkZr~ thou dh vfHkyk"kk vFkZ ea] L=hiq=kfn dh dke ea] eku] Kku vkj U;k; dh /keZ esa vkj ijyksd dh dkeuk ek{k esa lek tkrh gSA vFkkZr~ leLr ,"k.kkvksa dk lekos'k vFkZ] /keZ] dke vkj ek{k esa gks tkrk gS vkj pkjksa inkFkZ ,d nwljs ds vk/kkj] vk/ks; cu tkrs gSA ftl idkj vFkZ vFkkZr~ HkkstuoL=kfn ds fcuk 'kjhj dh fLFkfr ugha jg ldrh vkj u dke vFkkZr~ jfr ds fcuk 'kjhj mRiUu gh gks ldrk gS vkj u fcuk 'kjhj vkj 'kjhj fuokZg ds ek{klk/ku gh gks ldrk g] mlh rjg fcuk ek{klk/ku ds fcuk ek{kekxZ fu/kkj.k fd;s vFkZ vkj dke dks Hkh lgk;rk ugha fey ldrhA

श्रेष्ठ परम्पराओं की रक्षा करो

तन्तुं तन्वन् रजसो भानुमन्विहि, ज्योतिष्मतः पथो रक्ष धियाकृतान्।
अनुल्बणं वयत् जोगुवामपो, मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्।।
ऋ० १०/५३/६

अर्थ : हे कर्मशील मनुष्य (रजसः) संसार का (तन्तुम्) ताना बाना (तन्वन्) बुनता हुआ भी (भानुम्) प्रकाश या सूर्य के (अन्विहि) पीछे चल, अनुसरण कर अर्थात् उसको आदर्श मानकर व्यवहार कर। (धियाकृतान्) बुद्धि द्वारा बनाये गये या परिष्कृत किए हुए (ज्योतिष्मतः) ज्योति से युक्त (पथः) मार्गों की (रक्ष) रक्षा कर अर्थात् ज्ञानयुक्त मार्गो पर चल। (जोगुवाम्) निरन्तर ज्ञान और कर्म अनुष्ठान करने वालों के अर्थात् विद्वानों और सामगान करने वाले लोगों के (अनुल्बणम्) उलझन रहित, यथोचित (अपः) कर्मों को (वयत्) विस्तृत करो, फैलाओ। (मनुः+भव) मनुष्य या मननशील बनो (दैव्यं जनम्) दिव्यगुण, कर्म, स्वभाव वाली संतान या समाज को (जनया) उत्पन्न करो।

इस वेदमंत्र में मनुष्य को समझाया और बताया गया है कि तू सांसारिक कर्त्तव्य कर्मों और व्यवहारों को ठीक प्रकार चलाने के लिए सूर्य का अनुकरण कर, उसको अपने जीवन का आदर्श मानकर ज्ञान–युक्त कर्म करता हुआ चल।

मनुष्य जीवन की सफलता और इसके उद्देश्य की प्राप्ति हेतु कितना सुन्दर मार्ग वेद ने दर्शाया है कि जीवन एक तन्तु है। जिस प्रकार जुलाहा कपड़ा बुनने के लिए ताना–बाना तानकर अपना कार्य आरम्भ करता है इसी प्रकार मनुष्य अपने जीवन में अनेक कार्यों का ताना–बाना बुनकर कार्य चलाता है। जीवन में अनेक प्रकार के कर्मों और संस्कारों के सूत ओत–प्रोत हैं। इसलिये वेद ने जीवन को तन्तु और मनुष्य को उसका तन्तुवाय कहा है। मनुष्य का जीवन भी एक यज्ञ है और मन की सूक्ष्म प्रवृत्तियाँ उस यज्ञ का ताना–बाना हैं। मनुष्य जीवन का यह ताना–बाना किसी भी प्रकार बंद नहीं किया जा सकता। बहुत से लोग या मत–मतान्तर दूसरे लोगों को यह शिक्षा देते फिरते हैं कि सांसारिक धंधों को करने की कोई आवश्यकता नहीं ''ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या'' केवल ब्रह्म ही सत्य है और संसार का झगड़ा झूठा है। इससे अलग होकर बैठ जाओ, गुरुओं की सेवा करो तथा काम करने की कोई आवश्यकता नहीं है। उन लोगों से पूछो कि तब जीवन निर्वाह कैसे चलेगा और उस ब्रह्म की प्राप्ति भी बिना ज्ञान के कैसे हो पाएगी?ब्रह्मप्राप्ति के लिए ज्ञान अर्जित करना और उस मार्ग पर चलना भी तो बहुत बड़ा और कठिन कार्य है। वेद का दृष्टिकोण स्पष्ट है कि 'तन्तुं तन्वन्' अर्थात् अपना जो कर्त्तव्य कर्म है उसको ठीक प्रकार पूरा करते हुए आप जिस वर्ण या आश्रम में हैं, उसके धर्म को पूरी तरह निष्ठापूर्वक निभाते हुए अपने सामाजिक धर्म और व्यवहारों को ठीक प्रकार चलाते हुए अपना जीवन यापन करो। परन्तु इस जीवन यज्ञ में कोई आहुति बिना वेद मंत्र बोले ही न आहुत हो जाये इसके लिए एक काम करना कि (रजसो भानुमन्विहि) आकाश के सूर्य को अपने जीवन का आदर्श मानकर उसके अनुसार काम करना। सूर्य की भांति तप–त्याग, परिश्रम तथा ज्ञान के प्रकाश से तेजस्वी बनकर संसार के अज्ञानरूपी अंधकार को हरते चले जाना। अज्ञान और विषय–वासनाओं के चक्र में फंस कर वेद–मार्ग की राह मत भुला देना।

सूर्य नियमित रूप से ठीक समय पर उदित होता है और निश्चित समय पर ही अस्त होता है, हम भी अपने जीवन में प्रत्येक कार्य निश्चित समय पर करने का अभ्यास करें, अर्थात् अपनी जीवन पद्धति नियमित बनायें।

सूर्य से हम परोपकार और समानता का व्यवहार सीखें। हमारे भू–मण्डल का सारा कार्य व्यवहार उसी के ऊपर आधारित है। संसार के सभी जीव–जन्तुओं और वनस्पति आदि को उसी से जीवन मिलता है। सूर्य की भांति हमारा जीवन भी संसार के सभी जीव–जन्तुओं का जीवन दाता अर्थात् सहारा देने वाला हो। हमारी प्रेरणा से उनके जीवन में नव–जीवन का संचार हो। सूर्य की **(जिस प्रकार अपने घरों, सड़कों और मार्गों को हम बार-बार साफ करते हैं फिर भी कई बार उनमें कूड़ा-कर्कट, ईंट-पत्थर या रेत मिट्टी रह जाती है। इसी प्रकार धर्म-मार्ग में भी काम करते समय ईर्ष्या-द्वेष छल-कपट, स्वार्थ और भ्रष्टाचार रूपी कंकर-पत्थर रुकावट डाला करते हैं।)** किरणें संसार को रोग के कीटाणुओं से रहित कर देती हैं, ऐसे ही हम वैदिक ज्ञान के प्रकाश द्वारा संसार के अज्ञान रूपी अंधकार को नष्ट करते चले जायें जिससे वैदिक ज्ञान का उदय होता चला जाये।

सूर्य सदैव अपनी परिधि में घूमता है हम भी मानवता रूपी परिधि में रह कर सब कार्य करें, सूर्य को अपने जीवन का आदर्श बनायें। यह तभी संभव हो सकता है जब हम स्वयं को तप, त्याग और ज्ञान–विज्ञान तथा वैदिक साधना द्वारा ज्योतिर्मय कर लेते हैं क्योंकि एक प्रज्ज्वलित दीपक अनेक बुझे हुए दीपकों को जलाकर ज्योति प्रदान कर सकता है परन्तु हजारों बुझे हुए दीपक एक बुझे हुए दीपक को भी प्रज्ज्वलित नहीं कर सकते। ''भानुमन्विहि'' का यही अर्थ है कि हम संसार में सूर्य की भांति ज्ञान शिखर पर रहकर अपने द्वारा अर्जित वेद–ज्ञान द्वारा संसार को वेद–ज्योति से ज्योतिर्मय करते चलें तथा अज्ञान रूपी तिमिर को नष्ट कर डालें।

मंत्र का अगला वाक्य कितने महत्व का है, विचार करें–

''ज्योष्मितःपथो रक्ष धियाकृतान्''

अर्थात् बुद्धि द्वारा बनाये गये प्रकाश मार्गों की रक्षा कर। कैसा ज्ञान है वह?बुद्धि से परिष्कृत किया हुआ, ऋषियों द्वारा प्रदत्त और ज्योति से युक्त ज्ञान मार्गों पर चल कर उसकी रक्षा करें। जैसे सूर्य अपने तेज से भौतिक जगत् को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार विद्वान्, बुद्धिमान और ज्ञान लोग अपनी बुद्धि के प्रकाश से ज्ञान मार्गों को प्रशस्त करते हैं। कैसा है वह ज्ञान?वह ज्ञान कोई साधारण ज्ञानी नहीं है। परमात्मा द्वारा प्रदत्त वेद ज्ञान जो सृष्टि के आरंभ में ऋषियों के हृदय में दिया गया और उन्होंने उस ज्ञान को अपनी बुद्धि द्वारा संसार के कल्याणार्थ जन–जन तक पहुँचाने का प्रयत्न किया है। ऐसे

— अध्यापक देवराज आर्य

उपयोगी और सर्वहितैषी ज्ञन की हम रक्षा करें और उसको प्रसारित करने का पूर्ण यत्न करें। कैसे हो इस वेद के ज्ञान का प्रचार–प्रसार?बुद्धि द्वारा वेद–शास्त्रों को पढ़ने, उनकी शिक्षाओं पर आचरण करने, अपना कुछ समय कर्त्तव्यभाव से समाज में वेद प्रचार हेतु लगाने से इस वेद ज्ञान की रक्षा तथा प्रचार–प्रसार हो सकता है। इसके लिए ईर्ष्या–द्वेष, छल–कपट का त्याग तथा तीनों ऐषणाओं से दूर रह कर तप, त्याग एवं कर्त्तव्यपालन को प्राथमिकता देनी पड़ेगी। महर्षि दयानन्द ने ज्ञानमार्गों की रक्षा के लिए आर्य समाज के तीसरे नियमोद्देश्य में लिखा है 'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।'

आत्मचिन्तन करके देखें, अपने मन में बुद्धिपूर्वक विचार करें, क्या हम इस नियम या किसी भी नियम की ठीक प्रकार पालना कर रहे हैं?जब हम वेद का पढ़ना–पढ़ाना जो कि परम–धर्म हमारे लिये लिखा है, उसको ही जीवन में नहीं उतार सके तो वेद–विद्या के ऊपर आचरण कैसे होगा और आठवें नियमानुसार अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि कैसे हो जायेगी?जब यह सब कुछ नहीं कर सकते तो ''ज्योतिष्मतः पथो रक्ष धियाकृतान्'' का नारा सार्थक नहीं हो सकता। यही कारण है कि आज समाज आगे बढ़ने की अपेक्षा ज्ञान मार्गों की रक्षा और ज्ञान का प्रचार करने के स्थान पर ऐषणाओं में उलझ गया है। चारों वर्ण और चारों आश्रम धन और मान के पीछे अपनी पूरी शक्ति के साथ लगे हुए हैं।

मान लीजिए आपने किसी धार्मिक कार्य जैसे वेद–प्रचार, अनाथ–पालन, गौरक्षा, राष्ट्र उत्थान, धर्मार्थ औषधालय अथवा मानवता के हितार्थ दान देना प्रारम्भ किया है, आपके दान देने की प्रक्रिया किसी कारण बंद हो गई है। परन्तु आपने दान देने की ऐसी श्रेष्ठ परम्परा आरम्भ कर दी जो भविष्य में आने वाली पीढ़ियों को लाभान्वित करती रहेगी एवं उनके लिए प्रेरणा का स्रोत भी बनी रहेगी जैसे दानवीर भामाशाह देश, धर्म, जाति की रक्षा के लिए दान की तथा महाराजा प्रताप मान और सम्मान की परम्परा छोड़ गये जो आने वाली संतान के लिये प्रकाश स्तम्भ का काम करेगी।

जिस प्रकार अपने घरों, सड़कों और मार्गों को हम बार-बार साफ करते हैं फिर भी कई बार उनमें कूड़ा-कर्कट, ईंट-पत्थर या रेत मिट्टी रह जाती है। इसी प्रकार धर्म-मार्ग में भी काम करते समय ईर्ष्या-द्वेष छल-कपट, स्वार्थ और भ्रष्टाचार रूपी कंकर-पत्थर रुकावट डाला करते हैं।

महर्षि दयानन्द ने घोर तप, त्याग और कठिन परिश्रम से प्राप्त सदियों से लुप्त वेद ज्ञान के कोष को संसार के समक्ष रखकर सदा सदा के लिए वेद ज्योति के प्रकाश से मानवता को जगमग कर दिखाया। उन्हीं की प्रेरणा से दीर्घकाल से सोई आर्य जाति जागी और अपने आपको पहचाना। सत्यार्थ प्रकाश पढ़कर और इस महान ग्रंथ से प्रेरणा लेकर कितने आर्य वीरों ने अपनी मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिये हँसते–हँसते अपने प्राण न्यौछावर कर दिये। कितने वीर और वीरांगनाएँ भविष्य में आने वाली पीढ़ियों के लिए अपना जीवन बलिदान कर राष्ट्र की रक्षा और सम्मान हेतु 'ज्योति पथ' की राहें निश्चित करके चले गये। वेद मंत्र यही शिक्षा दे रहा है कि ज्ञान–विज्ञान, वेद सूत्रों और प्रकाश के मार्गों की अपनी बुद्धि के द्वारा रक्षा करो।

मंत्र में आगे कहा गया है कि –: अनुल्बणं वयत जोगुवामपो :– जीवन रूपी ताना–बाना बुनते समय जो तन्तु टूट जायें उन्हें पुनः जोड़ लेना चाहिये। यदि जोड़ते समय बीच में गांठ पड़ जाये तो कोई बात नहीं, अपनी ज्ञान ज्योति का क्रम जारी रखना चाहिये। जिस प्रकार अपने घरों, सड़कों और मार्गों को हम बार–बार साफ करते हैं फिर भी कई बार उनमें कूड़ा–कर्कट, ईंट–पत्थर या रेत मिट्टी रह जाती है। इसी प्रकार धर्म–मार्ग में भी काम करते समय ईर्ष्या–द्वेष, छल–कपट, स्वार्थ और भ्रष्टाचार रूपी कंकर–पत्थर रुकावट डाला करते हैं। ज्ञान और सहनशीलता सहित कर्त्तव्यपथ पर चलते हुए, श्रेष्ठ कामों को दूषित करने वाले लोगों से बचकर, ज्ञानमार्गो की रक्षा करते हुए आगे बढ़ते चले जायें। जिन प्राचीन वैदिक प्रथाओं को हम भूल गये हैं उन्हें पुनः जाग्रत करने की विशेष आवश्यकता है।

''अनुल्वणम्'' विद्वानों और सामगान करने वाले ऋषियों के उलझन रहित अर्थात् यथोचित कर्मों को, ज्ञान–विज्ञान को आगे बढ़ाओ। जो श्रेष्ठ वैदिक कार्य ऋषि, मुनि, महात्मा लोग ज्ञानमार्गों की रक्षा के लिए करते आये हैं, उन यज्ञीय और परोपकारमय कर्मों को हम भी निःस्वार्थ भाव से लोकहित के लिये करने में अपने आपको समर्पित कर दें। 'परोपकारः पुण्याय, पापाय परपीडनम्' निष्कामभाव से प्राणीमात्र की सेवा करने में कहीं भी कोई उलझन पैदा नहीं होती। जितनी भी उलझनें पैदा होती हैं, वे सब स्वार्थ के कारण होती हैं।

महर्षि दयानन्द ने अत्यन्त उलझे हुए ज्ञानमार्ग को समझने के लिए कठोर परिश्रम और रात दिन तप करके वैदिक ज्ञान प्राप्त किया। शिक्षा पूरी हो जाने पर गुरु दक्षिणा के रूप में अपना सारा जीवन ही गुरु के अर्पण कर दिया तथा अपना सम्पूर्ण जीवन, बल, बुद्धि और ज्ञान–संसार को वैदिक ज्योति से ज्योतिर्मय करने के लिए समर्पित कर दिया। सदियों से लुप्त हुए वैदिक ज्ञान को संसार के समक्ष प्रस्तुत कर प्रसारित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। गुरु के समक्ष की प्रतिज्ञा को पूर्ण रूपेण निभाया।

अपने जीवन की कोई परवाह न करते हुए वैदिक ज्ञान की रक्षा और प्रचार–प्रसार को अपना परम धर्म समझते हुए, अन्त में 'हे ईश्वर! तेरी इच्छापूर्ण हो' कहते हुए अपने जीवन की आहुति देकर संसार के लोगों को वेद–पथगामी बना गये।

एक नहीं, अनेकों ऋषि, महात्मा, विद्वान्, राष्ट्रभक्त, दानी और वीर अपने–अपने क्षेत्र में हमारा मार्ग–दर्शन करके चले गये। अब यह हमें देखना है कि हम इन ज्ञान–मार्गो की रक्षा करने और ऋषियों मुनियों के ऋण से उऋण होकर अपना कर्त्तव्य पालन करने में कहां तक सफल होते हैं।

'मनुर्भव जनया दैव्यं जनम् :– मंत्र का अन्तिम भाग मनुष्य को 'मनुष्य' मननशील बनने और दिव्य गुण, कर्म, स्वभाव वाली संतान उत्पन्न करने अथवा श्रेष्ठ, धर्मात्मा, परोपकारी, सत्यनिष्ठ एवं वेदपथ पर चलने वाले समाज के निर्माण की योजना पर चलने के लिए प्रेरित कर रहा है। मंत्र का यह बहुत महत्त्वपूर्ण भाग है।

वेद कहता है 'मनुष्य बनो' परन्तु लोगों के सामने जब यह बात कहते हैं तो वे उत्तर देते हैं कि संसार में लोगों की क्या कमी है। इस धरती पर वर्तमान समय में पाँच अरब के लगभग जनसंख्या है। क्या आपको इनमें कोई मनुष्य ही नहीं दिखाई देता?मैंने बैठ कर विचार किया तो मनुष्य एवं पशु में स्पष्ट अन्तर दिखाई देने लगा। किसी कवि ने इस विषय में कहा है–

येषां न विद्या न तपो न दानं,
ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः।
ते मर्त्यलोके भुवि भारभूता,
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति।।

जिन लोगों का मन विद्या में रत नहीं है अर्थात् जो व्यक्ति विद्या के स्वरूप को न जानकर केवल अक्षर ज्ञान में रत होकर अपने आपको विद्वान समझते हैं और ब्रह्मप्राप्ति के साधन कुछ भी नहीं करते, वेद शास्त्रानुकूल जिनका आचरण नहीं, आत्मकल्याण के मार्ग का जिनको पता नहीं, विद्या पढ़कर जिसने इहलोक और परलोक का सुधार नहीं किया, विद्या के द्वारा जिन्होंने तीन अनादि पदार्थों को जानकर मानव जीवन के परम उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति का यत्न नहीं किया तो मनुष्य होने का अर्थ ही क्या है?

उक्त गुणों के बिना मनुष्य रूप में पशु ही धरा धाम पर विचरण कर रहे हैं। हम इन गुणों के आधार पर मनुष्य और पशु में विश्लेषण करें तो मनुष्यता का परिणाम कितने प्रतिशत आयेगा?जब परिणाम ही मनुष्यता का संतोषजनक नहीं है अर्थात् हम मानवीय गुणों में फेल हैं तो धर्म कौन करेगा?और धर्म के बिना सुख कहाँ से आयेगा?इसी आधार पर मंत्र में कहा गया है कि 'मनुर्भव अर्थात् हे मनुष्य यदि तू सुख, शांति, आनन्द और मोक्ष चाहता है तो मानवता के मार्ग पर चलना आरम्भ कर दें। इसी में तेरा कल्याण है।

''जनया दैव्यं जनम्'' वेद मंत्र के इस वाक्य द्वारा पूर्णतः यह समझाया गया है– कि पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति हेतु संसार का ताना–बाना बुनते हुए अर्थात् अपने दैनिक कार्यों को ठीक–ठीक धर्मपूर्वक करते हुए, सूर्य का अनुकरण करना। ज्ञान मार्गों की रक्षा करना। श्रेष्ठ काम करने वाले लोगों के कर्मों को आगे बढ़ाने का पूरा प्रयत्न करना। ये सभी कार्य मनुष्य बनकर चलने से ही होंगे इसलिये जीवन में मानवता धारण करके चलना। परन्तु एक बात पर विचार कर कि जिन कल्याणकारी कर्मों को करने की तूने प्रतिज्ञा की है, तेरे संसार से चले जाने के बाद इन ज्ञान तन्तुओं को कौन विस्तृत करेगा, इस ज्ञान गंगा को कौन बहायेगा?कौन चलायेगा इस दुनिया को वेदमार्ग पर?इसके लिए एक काम करना 'जनया दैव्यं जनम्'' अर्थात् दिव्य गुण, कर्म, स्वभावयुक्त संतान उत्पन्न करके जाना अर्थात् श्रेष्ठ गुणों वाले समाज का निर्माण करना, जिसका लक्ष्य मानवता को सत्य, अहिंसा, परोपकार, तप और कर्त्तव्यपालन के मार्ग पर आरूढ़ करना हो। आज मनुष्य–मनुष्य के साथ जितना छल–कपट, अत्याचार और स्वार्थपूर्ण व्यवहार कर रहा है इतना तो कोई पशु भी नहीं करता।

प्राचीन इतिहास का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि जब तक आर्य–जाति इस मंत्र पर विचार करके संसार को धर्म–मार्ग दिखाती रही तब तक भारत संसार का गुरु कहलाया। जरा रामायण काल को देखें, राम की महानता किस बात में थी?राम की महानता 'मर्यादापालन' और 'धर्मपालन' में थी। उन्होंने केवल अपने ही कुल की मर्यादा को कायम नहीं रखा अपितु संसार के सम्मुख एक आदर्श आज्ञाकारी, तपस्वी, त्यागी पुत्र, विशालहृदय भाई, विश्वासी मित्र, निर्लोभी शासक एवं दुष्ट दलनकारी क्षत्रिय के रूप में आने वाली पीढ़ियों के लिए अमरता का दीपक जला दिया, जिसके दिव्य प्रकाश में हम युग–युग तक अपने जीवन की राहें निश्चित करते रहेंगे।

इसी प्रकार श्रीकृष्ण के जीवन की महानता 'योग' में थी। वे महान् योगीराज, कुशल राजनीतिज्ञ, पापियों के दलनकर्ता, निरभिमानी, निर्भीक, दूरदर्शी एवं सफल प्रशासक थे। उन्होंने उस समय अनेक छोटे–छोटे राज्यों में बिखरे राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधने का पूर्ण प्रयत्न किया।

महर्षि दयानन्द के उपकारों को हम कभी नहीं भुला सकते और उनके ऋण से कभी उऋण भी नहीं हो सकते। महर्षि ने अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु घोर तप, त्याग एवं परिश्रम किया। संसार को सदियों से भूले वैदिक ज्ञान से ज्योतिर्मय कर गये। किसी कवि ने सच कहा है कि–

सौ बार जन्म लेंगे, सौ बार फना होंगे,
अहसान दयानन्द के फिर भी न अदा होंगे।

अतः हम सबका कर्तव्य है कि ऋषियों द्वारा बताये ज्ञान मार्गो की रक्षा करते हुए 'मनुर्भव' के नारे को जीवन में सार्थक करें।

–आर्य टैंट हाऊस, रोहतक मार्ग, जीन्द

सोशल मीडिया के माध्यम से स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ें

आर्य युवा सन्यासी व सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ने के लिए इस लिंक पर क्लिक करें
www-facebook-com/SwamiAryavesh व फेसबुक पेज को लाइक करें व अन्य मित्रों को भी प्रेरित करें।
ई–मेल : aryavesh@gmail.com
Tel. :-011-23274771

प्रतिष्ठा में :–

अवितरण की दशा में लौटाएँ –
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
"दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–110002

स्वास्थ्य चर्चा

अलसी के छोटे–छोटे दानों में छिपे हैं – बड़े–बड़े गुण

– वैद्य हरिकृष्ण पांडेय 'हरीश'

कुछ लोगों के लिए अलसी का नाम नया हो सकता है लेकिन कई क्षेत्रों में इसका प्रयोग भरपूर होता है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी ने कहा था कि जिस समाज में अलसी का सेवन किया जाता है वह समाज सदा स्वस्थ रहता है। अलसी को फ्लेक्सी सीड भी कहा जाता है। आयुर्वेद में अलसी के सेवन के भी नियम हैं। जैसे अलसी के दाने को चुनकर सबसे पहले इसको साफ कर ज्यादा से ज्यादा सौ ग्राम कड़ाही में डाल कर जरा सा घी का छींटा लगाकर भूनें। भूनते समय ढक कर भूनें। चटक कर उछलती है, इसलिए सावधानी बरतें। चट–चट करने लगे तब गैस बंद कर ठंडा होने दें। ठंडा होने पर अलसी के दाने को मिक्सी में डालकर दरदरा पीसें। ढक्कन बंद डिब्बे में सुरक्षित रखें। एक–एक चम्मच पानी या दूध के साथ लें। ध्यान रखें इसे सिर्फ एक हफ्ते के अन्दर ही प्रयोग करें, बाद में खराब हो जाता है। ऐसे में अगर हम अलसी का सेवन करें तो निश्चित रूप से कई बीमारियों से छुटकारा पाया जा सकता है तथा शरीर को चुस्त एवं फिट रखा जा सकता है। किस बीमारी में अलसी का प्रयोग करें वो इस प्रकार है :–

[kk lh& t dke & अलसी की चाय पियें, बनाने का तरीका जरा अलग है। दो कप पानी उबालें, एक चम्मच अलसी पाउडर डालें, धीमी आंच पर पकायें। आधा यानी एक कप पानी बच जाये तो छान लें, गुड़ या शहद मिलाकर दिन में दो से तीन बार पियें।

nek & एक चम्मच अलसी के चूर्ण को आधे गिलास पानी में बारह घंटे तक भिगोकर रखें। सवेरे का भीगा शाम को और शाम का भीगा सवेरे छान कर पिलायें। ध्यान रहे गिलास या तो चांदी की या शीशे की हो।

Mk;fcVht & ताजा पिसी अलसी, आंटा गूंथते समय 25 ग्राम मिलाकर रोटी खायें।

ân; dk fy, mi;kxh & खराब कोलस्ट्रोल की मात्रा कम करती है। दिल की धमनियों में खून के थक्के नहीं जमने देती। एक–एक चम्मच सुबह–शाम पानी या दूध के साथ लें।

ikpur= dk lgk;rk & अलसी में ऐसे फाईबर होते हैं

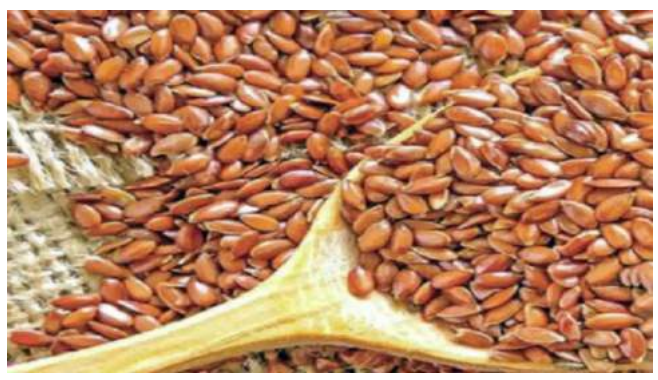

जो कब्ज, बवासीर, भगंदर, प्रवाहिका आदि में बहुत लाभकारी है। कब्ज के लिए तो अलसी अति उत्तम है। पित्त की थैली में पथरी हो तो अलसी का सेवन चमत्कारिक लाभ देता है।

gStk & हैजा में इसका चूर्ण 5 ग्राम, 50 ग्राम पानी में डालकर ठंडा कर दिन में तीन बार पिलाना हितकारी है।

vfunzk & नींद न आना, कम आना, मानसिक तनाव आदि के लिए अलसी तथा एरंडी का तेल मिलाकर सिर पर मालिस करने, पांव के तलवे पर मलने से आराम मिलता है।

oh;Z fodkj & इसका चूर्ण, समान भागखंड, आधी मात्रा देशी घी मिलाकर सुबह–शाम एक चम्मच लेना चाहिए।

isV dh xehZ & अलसी का सेवन पेट की गर्मी दूर करने तथा दस्त साफ कर वीर्य को गाढ़ा बना संतानोपत्ति योग्य बनाती है।

dEiokr ¼ikjfdUlu½ & इस बीमारी में हाथ–पैर पर सिर का नियंत्रण नहीं होता। हमेशा हिलते रहते हैं, चलने में परेशानी होती है। एक चम्मच अलसी चूर्ण शहद के साथ दिन में दो बार देना हितकर है।

dej rFkk tkMksa dk nnZ & अलसी में सोंठ का चूर्ण और नमक मिलाकर लगाने से लाभ होता है। बनाने की विधि अलसी तेल 250 ग्राम, 15 ग्राम सोंठ चूर्ण, 15 ग्राम नमक डालकर धीमी आग पर पकाएं, जब तेल में धुआं उठने लगे तब उतार कर छान कर ठंडा कर दर्द वाले स्थान पर लगायें।

tyus ij & अलसी तेल, चूने का पानी मिलाकर खूब घोंटें। यह सफेद मलहम बन जायेगा, जले स्थान पर दिन में दो बार लगायें। इसके अलावा अलसी के सेवन से यौवन समस्या, शारीरिक दुर्बलता, गर्भपात, स्तनपान के दौरान दूध न आना, कम आने में एक–एक चम्मच सुबह–शाम पानी या दूध से लेना हितकर है। साथ ही रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने तथा थायरॉयड की कार्यकुशलता नियंत्रित करने एवं नियमित करने में सहायक है।

।।ओ३म्।।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा
25 हजार वेद सैट प्रकाशित करने की महत्त्वाकांक्षी योजना

घर–घर तक पहुँचाई जायेगी परमात्मा की वेद वाणी

चारों वेदों का सम्पूर्ण हिन्दी भाष्य

भारी छूट पर उपलब्ध

(महर्षि दयानन्द, तुलसीराम स्वामी एवं पं. क्षेमकरण दास कृत)
(10 खण्ड, 9 जिल्दों में)

मात्र 3100/– में

एक वेद सैट मात्र 3100/– रुपये में उपलब्ध है।

10 अथवा उससे अधिक वेद सैट लेने पर लागत मूल्य में 30 प्रतिशत की छूट दी जायेगी

प्रत्येक आर्य समाज, स्कूलों के पुस्तकालयों, वाचनालयों तथा प्रत्येक घर में परमात्मा की वाणी वेदों का होना आवश्यक है। अधिक से अधिक संख्या में अग्रिम आदेश भेजकर भारी छूट का लाभ उठायें। डाक व्यय 300/– रुपये अलग से देना होगा। प्रारम्भिक स्तर पर 25 हजार वेद सैट प्रकाशित करने की योजना क्रियान्वित की जायेगी।

अपना आदेश **'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा'** के नाम चैक/बैंक ड्राफ्ट द्वारा "दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–2 के पते पर अग्रिम भेजकर अपना वेदों का सैट बुक करा सकते हैं।

–: प्रकाशक :–
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, "दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–110002 ● दूरभाष :– 011–23274771

प्रो० विट्ठलराव आर्य, सभा मंत्री, प्रकाशक व मुद्रक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, 3/5 महर्षि दयानन्द भवन, (रामलीला मैदान/आसफ अली रोड), नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित तथा ज्योति प्रिंटिंग प्रेस, ई-94, सैक्टर-6, नोएडा-201301 से प्रकाशित एवं मुद्रित। (फोन : 011-23274771, 23260985 टेलीफैक्स : 23274216)
सम्पादक : प्रो० विट्ठलराव आर्य (सभा मन्त्री) मो.:0-9849560691, 0-9013251500 ई-मेल : sarvadeshik@yahoo.co.in, sarvadeshikarya@gmail.com वैबसाइट : www.vedicaryasamaj.com

वैदिक सार्वदेशिक साप्ताहिक में छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक या सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की सैद्धान्तिक मतैक्यता होना अनिवार्य नहीं है।